पंत की जीवन-दृष्टि के विविध सोपान

*रामगोपाल मीणा

''छोड द्रुमो की मृदु छाया,
तोड़ प्रकृति सें भी माया
बाले तेरे बाल–जाल में
कैसे उलझा दूँ लोचन
भूल अभी से इस जग को ।''1

प्रकृति–सौन्दर्य के उपासक, उसके कुशल चितेरे, प्रकृति के सुकुमार कवि कहे जाने वाले सुमित्रा नन्दन पंत का जन्म 20 मई 1900 ई. में उत्तर–प्रदेश के जिला अल्मोडा के ''कौसानी'' गाँव में हुआ था । इनके पिता का नाम गंगादत्त व माता का नाम सरस्वती देवी था । जन्म के कुछ घंटो बाद ही इनकी माता का देहान्त हो गया था, अतः प्रकृति की गोद में ही पंत खेल–कूद कर बडे हुए । ''बचपन से ही कविता लिखना शुरू किया और सात साल की उम्र में स्कूल में काव्यपाठ के लिए पुरस्कृत हुए । 1915 में स्थायी रूप से साहित्य–सृजन आरम्भ किया और छायावाद के प्रमुख स्तंभ के रूप में जाने गए । प्रारम्भ में प्रकृति, प्रेम और रहस्यवाद इनकी कविता में झलकता है । 1936 में '' युगान्त'' लिखकर मानों इन्होंने छायावाद के अंत का घोषणा–पत्र लिखा । उसके बाद मार्क्स और महात्मा गाँधी के विचारों के प्रभाव में आए । बाद की कविताओं पर अरविन्द दर्शन का प्रभाव नजर आता है । 1950 से 1957 तक आकाशवाणी के परामर्शदाता संपादक रहे । 1960 में '' कला और बूढा चाँद'' पर साहित्य अकादमी से सम्मानित। 1961 में भारत सरकार ने पद्मभूषण देकर सम्मानित किया। 1969 में 'चिदम्बरा' पर भारतीय ज्ञानपीठ से सम्मानित हुए। 28 दिसम्बर 1977 को परलोक सिधार गए ।''2 निरन्तर साहित्य–साधना में लीन रहते हुए पंतजी के जीवन में कई उतार–चढाव आए, परिणामस्वरूप उनके जीवन–दर्शन में भी कई स्तरों पर बदलाव होता रहा ।

जीवन–दृष्टि से तात्पर्य है कि एक व्यक्ति किस रूप में अपने जीवन व आस–पास के परिवेश को देखता है, उसकी विचारधारा किस प्रकार की है । प्रत्येक व्यक्ति अपने–अपने अनुभव व नजरिये से अपने समय व समाज को देखता है अतः प्रत्येक व्यक्ति की जीवन–दृष्टी एक – दुसरे से भिन्न होती है, और कभी–कभी एक–दुसरे को प्रभावित भी करती हैं। इसी कारण की विचारधारा में भी एक सीमा के बाद बदलाव होता रहता है। ये बदलने की प्रक्रिया मुख्यतः दो त्तवों पर निर्भर रहती हैं–

1.ज्ञान, 2. अनुभव। हर बड़ा रचनाकार अपने ज्ञान व अनुभव के आधार पर अपने समय व समाज को देखता–परखता है, लेकिन समय के परिवर्तन के साथ उसमें बदलाव भी आता रहता हैं। हिन्दी साहित्य के छायावादी कवि सुमित्रानन्दन पंत ऐसे ही कवि थे जिनकी कविताओं का स्वर समय के प्रभाव स्वरूप बदलता रहा, उनकी जीवन–दृष्टि के विविध सोपानों को निम्न शीर्षकों से स्पष्ट कर सकते हैं।

प्रकृतिपरक जीवन–दृष्टि :

पंतजी की प्रारम्भिक कविताऐं छायावादी काल की है, जिनमें उनकी जीवन–दृष्टि प्रकृति–प्रेम की रही, इसी कारण उनकी शुरू की कविताओं में प्रकृति–सौन्दर्य की प्रधानता रही है। 'वीणा' (1920), 'पल्लव' (1928), 'गुंजन' (1932) सभी रचनाओं में प्रकृति–सौन्दर्य की अपूर्व छटा देखने को मिलती है । उन्होंने प्रकृति के आलम्बन, उद्दीपन, सम्वेदनात्मक, रहस्यात्मक, प्रतिकात्मक, मानवीकरण आदि विविध रूपों में प्रकृति सौन्दर्य का चित्रण किया है । पंत के लिए प्रकृति मात्र काव्य रचनों का साधन नहीं बल्कि उनकी चिर सहचरी है । जैसे–

उद्दीपन रूप में – ''देखता हुँ जब उपवन पियालों में फूलों के प्रिय भर–भर अपना यौवन पिलाता है मधुकर को ।''3

रहस्यात्मक रूप में– '' देख वसुधा का यौवन भार गुंज उठता है जब मधुमास विधुर उर के से मृदु उद्गार कुसुम जब खुल पडते है सोच्छवास''4

मानवीकरण रूप में –**''कौन तुम रूपसि कौन**
व्योम से उतर रही चुपचाप
छिपी निज छाया छबि में आप
सुनहला फैला केष कलाप''5

मार्क्सवादी जीवन–दृष्टि :

यह पंत की जीवन–दृष्टि का दूसरा सोपान है, जिसमें वे प्रकृति–सौन्दर्य और कल्पना के सुनहरे आकाश को छोडकर यर्थाथ के धरातल पर उतरा आए । अर्थात 'सुन्दरम' से 'शिवम्' की ओर बढते दिखाई पड़ते है। 'युगान्त', 'युगवानी', 'ग्राम्या' काव्य संकलन इसी प्रगतिवादी व मार्क्सवादी जीवन–दृश्टि से संबंधित है, जिसमें पंतजी मार्क्सवादी प्रगतिशील चेतना से प्रभावित होकर का विरोध करते है, पूँजीवादी व्यवस्था की भर्त्सना, श्रमिकों, शोषित–पीडित लोगों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते है । 'युगान्त' इसधार का प्रमुख काव्य संकलन है जिसमें कवि पुरातनता, रूढिवादिता, एवं निष्क्रिय मान्यताओं के प्रति आक्रोश व्यक्त करते है ।

उदा – **'' द्रुत झरो जगत् के जीर्ण पत्र**
हे त्रस्त ध्वस्त हे शुष्क शीर्ण
हिमताप पीत मधुमास मीत ।''6

इसी सन्दर्भ में गजानन माधव मुक्तिबोध भी लिखते है कि – '' जिस प्रकार पंतजी एक ओर ऐस्थीट हुए, उसी प्रकार दूसरी और पंतजी मार्क्सवादी विचारों के प्रभाव में आए । .... पंतजी मार्क्सवाद के प्रति बौध्दिक ढ़ंग से आकर्षित नहीं हुए, वरन् संवेदनात्मक मार्ग से चलकर अर्थात भावनुभूति व्दारा आकर्षित हुए। भौतिक जीवन का पक्ष मार्क्सवाद द्वारा और अन्तर्जीवन का पक्ष उच्च नैतिक आध्यात्मिक गुणों द्वारा, अध्यात्मवाद व्दारा, निष्कण्टक और समृध्द होगा, ऐसा उनका विश्वास रहा आया । पंतजी का अध्यात्मवाद वस्तुतः

*शोधार्थी : महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय-वर्धा महाराष्ट्र 442001

आध्यात्मिक गुणसंपन्नतावाद है, उच्च मानवीय गुणसंपन्नतावाद है । उनका मार्क्सवाद जनगन के प्रति उनकी सहज सहानुभूति ही का वास्तववादी विस्तार है ।7

गाँधीवादी जीवन–दृष्टि :

पंतजी की जीवन–दृष्टि, उनकी युगानुरूप बदलती विचारधारा का यह तीसरा सोपान है जिसमें वे मार्क्सवाद–गाँधीवाद के समन्वित प्रभाव में दिखाई पड़ते है । 'ग्राम्या' में पंतजी ग्रामीणों के प्रति भौतिक सहानुभूति प्रकट करते है, ग्रामीणों की यथार्थ झाँकी, उनकी जीवन–शैली का यथार्थ अंकन है । – उदा– **' झाड फूंस के विवर, यही क्या जीवन शिल्पी के घर कीड़ो में रेंगतें कौन यह बुध्दि प्राण नारी–नर।'' 8**

''मनुष्य का त्तव सिरवाता निश्चय हमको गाँधीवाद सामूहिक जीवन विकास की साम्य योजना है अविवाद।''9

अरविन्दवादी जीवन–दृष्टि :

यह पंतजी की जीवन–दृष्टि का चौथा सोपान है, जिसमें वे मार्क्सवाद–गाँधीवाद सिद्धान्तों से असंतुष्ट होकर अरविन्द दर्शन की तरफ उन्मुख हुए । – 'उत्तारा' की भूमिका में पंतजी स्वयं लिखते है कि '' अपनी नवीन अनुभूतियों के लिए, जिन्हे में अपनी सृजन–चेतना का स्वप्नसंचरण या काल्पनिक आरोहण समझता था, मुझे किस प्रकार के बौध्दिक तथा आध्यात्मिक अवलंब की आवश्यकता थी। इन्हीं दिनों मेंरा परिचय श्री अरविंद के भागवत जीवन से हो गया। उसके प्रथम खंड को पढ़ते समय मुझ को ऐसा लगा जैसे मेंरे अस्पष्ट स्वप्नचिंतन को अत्यंत सुस्पष्ट, सुगठित एवं पूर्ण दर्शन के रूप में रख दिया हो ।''10 अरविंद दर्शन मुख्यतः आध्यात्मिक दर्शन है, जबकि इस समझ पंतजी की मुख्य प्रवृत्तिा सामाजिकता की है । लेकिन पंतजी ने इन दोनों को समन्वित कर अपना नया दर्शन प्रस्तुत किया जिसमें सामाजिकता व आध्यात्म दोनों का समान पुट दिखलाई पड़ता है । इस स्तर पर पंतजी की दृष्टि वैयक्तिक–सामाजिकता की ओर बढ़ती चली गई । उन्होंने व्यक्ति को उर्द्धदंड बनने का संदेश दिया ताकि उनकी चेतना का विस्तार हो, वे आपसी देशमूलक मनोविकारों को भूलार एक समतामूलक समाज की स्थापना करें ।

उदा. – **'' व्यक्ति विश्व में व्यापक समता**
हो जन के भीतर से स्थापित''

अरविंद दर्शन से प्रभावित पंतजी की दो रचनाऐ प्रमुख है 'स्वर्णकिरण' और 'स्वर्णधूलि' । इसी दर्शन से प्रभावित होकर पंतने ब्रहम, जीव और जगत् तीनों को एक ही चेतना का रूप माना, जड़ और चेतन को अभिन्न माना, बुद्धिवाद का विरोध किया और ईश्वरीय प्रेम की भावना अपनाने की प्रेरणा दी ।

नवमानवतावादी जीवन–दृष्टि :

यह पंत की जीवन–दृष्टि का पाँचवा व अन्तिम सोपान है जिसमें पंतजी मानवता में आत्मसात् हो जाते है। यहाँ आकर पंतजी धर्म, नीति, जाति और संस्कृति का रूप मिटाकर नवमानवता के वाहक बन जाते है । 'कामायनी' में जयषंकर प्रसाद अपने जीवनानुभव व अर्जित ज्ञान द्वारा 'आनन्दवमद व समरसतावाद' की स्थापना करते है, उसी प्रकार पंतजी भी अपनी साहित्य–साधना के अंतिम चरण में ईर्ष्या, राग, द्वेष, पाप, अन्याय, अत्याचार से मुक्त 'नवमानवता' की ओर अग्रसर होते है । 'लोकायतन', 'कला और बूढ़ा चाँद', 'चिदम्बरा', 'उत्तारा', 'अतिमा' इसी प्रेरणा से पूरित काव्य–संकलन है ।

उदा : **में नवमानवता का संदेश सुनाता**

x x x

'' सर्वोपरि मानव संस्कृत बन मानवता के प्रति हो प्रेरित विश्व–प्रेम का करें उन्नयन''11 निष्कर्षतः पंतजी किसी एक धारा में बँधकर नहीं चले, बल्कि समय व समाज की बदलती करवटों के अनुसार उनकी जीवनाभूति तथा युगीन संवेदनाओं में भी बदलाव होता रहा, फलतः उनकी जीवन–दृष्टि के सोपान भी एक के बाद एक स्तर पर विकास क्रम में परिवर्तित होते रहे । वे 'सुन्दरम' से 'शिवम्' से 'शिवम् से सत्यम्' और 'सत्यम्' से **'वसुधैवकुटम्बकम'** की तरफ बढ़ते चले गये । डॉ. नगेन्द्र लिखते है कि 'ग्रन्थी से पल्लव' और 'पल्लव से गुंजन' ज्योत्सना से युगान्त में पंतजी क्रमशः शरीर से मन और मन से आत्मा की और बढ़ रहे थे । 'पंत सहचर' की भूमिका में पंत की इसी बदलती–जीवनदृष्टि के सन्दर्भ में–अशोक वाजपेयी लिखते है कि – 'वीणा', 'गुंजन', और 'पल्लव' के सौन्दर्यवादी पंत 'ग्राम्या', 'युगवाणी' और 'युगांत' में मार्क्सवादी कायांतरण के पश्चात् 'स्वर्णकिरण', स्वर्णधूलि तक अरविंदवादी भूमि पर संचरण करते है और 'कला और बूढ़ा चाँद' में स्वाभाविक कवि पंत की वापसी होती दिखती है ।''12

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र, पृ. 550.
2. पंत–सहचर (संपा.) अशोक वाजपेयी, (आवरण पृष्ठ)
3. वहीं, पृ. 139.
4. वहीं, पृ. 77.
5. प्रतिनिधि आधुनिक काव्य (संपा.), डॉ. चंन्द्र त्रिखा, हरियाणा साहित्य अकादमी., 2003, पृ. 103.
6. वहीं, पृ. 175.
7. पंत–सहचर (संपा.) अशोक वाजपेयी, पृ. 212.
8. स्वच्छंत (संपा.) अशोक वाजपेयी, राजकमल प्रकाशन, 2000.
9. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. बच्चन सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2002.
10. पंत–सहचर (संपा.) अशोक वाजपेयी, पृ. पृ. 85.
11. प्रतिनिधि आधुनिक काव्य (संपा.) डॉ. चन्द्रत्रिखा, हरियाणा साहित्य, अकादमी 2003, पृ. 101.
12. पंत–सहचर (संपा.) अशोक वाजपेयी, 'भूमिका से'.